राजकीय महाविद्यालय, पचवस, बस्ती (उ.प्र.)

ई-कंटेंट मॉड्यूल (E-Content Module) - 1

Course :- B.A. First Year , 1st Paper
University :- Siddharth University, Kapilvastu, Siddharthnagar (U.P.)

Subject :- Ancient History

Unit :– 2.4

Topic :- मौर्य प्रशासन (Mauryan Administration)

Prepared by :- Dr. Vijay Kumar
Designation:- Assistant Professor (Ancient History)
Institution:- Government Degree College, Pachwas, Basti (U.P.)
Date of Preparation: Oct. 2020

मौर्य प्रशासन (Mauryan Administration)

पृष्ठभूमि :-

मगध साम्राज्य का उत्कर्ष बिंबिसार के समय हुआ। मौर्य सम्राटों के अधीन मगध साम्राज्य पूर्णता को प्राप्त हो गया। मौर्य साम्राज्य का संस्थापक चंद्रगुप्त मौर्य था । चंद्रगुप्त मौर्य उच्च कोटि का प्रशंसक था , अपने प्रधानमंत्री चाणक्य के साथ मिलकर मौर्य शासन व्यवस्था की स्थापना की। अर्थशास्त्र और मेगास्थनीज की इंडिका , रुद्रदमन के गिरनार शिलालेख तथा सम्राट अशोक के विभिन्न शिलालेखों से मौर्य शासन व्यवस्था पर प्रकाश पड़ता है। मौर्य शासन व्यवस्था का स्वरूप राजतंत्रात्मक था परंतु इसके शासक जनकल्याण के लिए सदैव तत्पर रहे। सम्राट अशोक एक अत्यंत कुशल प्रशासक थे। उन्होंने मौर्य प्रशासन में नई शासन व्यवस्था को भले ही ना

उत्पन्न किया हो परंतु चंद्रगुप्त मौर्य द्वारा स्थापित शासन व्यवस्था में आवश्यकता अनुसार परिवर्तन एवं सुधार कर उसे प्रासंगिक और जनकल्याणकारी बनाया।

महाजनपद काल के नंद वंश के अंतिम शासक धननंद को मारकर चंद्रगुप्त मौर्य ने मौर्य साम्राज्य की स्थापना की। चंद्रगुप्त मौर्य को यूनानी लेखक सैंड्रोकाटस कहते हैं। सर्वप्रथम विलियम जॉन्स ने इस सेंट्रो कोट्स की पहचान चंद्रगुप्त मौर्य से की थी। चंद्रगुप्त मौर्य का साम्राज्य उत्तर पश्चिम में ईरान की सीमा से लेकर दक्षिण में वर्तमान उत्तरी कर्नाटक तक विस्तृत था। पूर्व में मगध से लेकर पश्चिम में सौराष्ट्र तथा सोपारा तक संपूर्ण प्रदेश उसके साम्राज्य के अधीन था। चंद्रगुप्त मौर्य के उपरांत उसके पुत्र बिंदुसार ने इस विशाल साम्राज्य को बनाए रखा। बिंदुसार के उपरांत सम्राट अशोक ने साम्राज्य विस्तार किया जिसमें 261 ईसा पूर्व में कलिंग युद्ध उसका अंतिम युद्ध था इतने विशाल साम्राज्य को अक्षर बनाए रखने के लिए एक कुशल और सक्षम प्रशासन की आवश्यकता थी जिसे चंद्रगुप्त मौर्य ने ही स्थापित किया और सम्राट अशोक तक इसमें आवश्यक परिवर्तन होते रहे। मौर्य शासन व्यवस्था का जनक चंद्रगुप्त मौर्य था। वह मात्र विजेता ही नहीं बल्कि उच्च कोटि का प्रशासक था।

महत्वपूर्ण शब्दावली :- समाहर्ता, सन्निधाता, प्रदेष्टा, व्यवहारिक, नायक, कर्मान्तिक, सूत्राध्यक्ष, सीतिध्यक्ष, सूचनाध्यक्ष, गणिकाध्यक्ष, नवाध्यक्ष या पत्तनाध्यक्ष

अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस मॉड्यूल को पढ़ने के बाद विद्यार्थी :-

1. मौर्य प्रशासन की केंद्रीकृत प्रकृति को समझ सकेंगे।
2. केंद्रीय, प्रांतीय, जिला एवं ग्रामीण प्रशासन की संरचना का वर्णन कर सकेंगे।
3. मौर्य काल की राजस्व, न्यायिक, सैन्य एवं गुप्तचर व्यवस्था का विश्लेषण कर सकेंगे।
4. अशोक के धम्म-प्रशासन की विशेषताओं को समझ सकेंगे।
5. मौर्य प्रशासन की उपलब्धियों एवं सीमाओं का मूल्यांकन कर सकेंगे।

मुख्य विषय-वस्तु :-

1. मौर्य प्रशासन की मुख्य विशेषताएँ
2. केंद्रीय प्रशासन (Central Administration)
3. प्रांतीय प्रशासन (Provincial Administration)
4. जिला एवं स्थानीय प्रशासन
5. राजस्व व्यवस्था (Revenue System)
6. न्यायिक व्यवस्था

7. सैन्य व्यवस्था

8. अशोक का धम्म प्रशासन

मौर्य प्रशासन की उपलब्धियाँ :-

- विशाल साम्राज्य का कुशल प्रबंधन।
- एकसमान कानून एवं मुद्रा प्रणाली।
- सड़क निर्माण (उत्तरापथ), सिंचाई, वन संरक्षण।
- नौकरशाही का वैज्ञानिक आधार।
- जन कल्याणकारी राज्य की अवधारणा।

केंद्रीय प्रशासन और सप्तांग सिद्धांत

कौटिल्य ने राज्य के सात अंगों (**सप्तांग**) का वर्णन किया है, जिन्हें एक जीवित शरीर के समान माना गया है:

1. **स्वामी (राजा):** राज्य का सिर।
2. **अमात्य (मंत्री):** राज्य की आँखें।
3. **जनपद (क्षेत्र व जनसंख्या):** राज्य की जंघाएं।
4. **दुर्ग (किला):** राज्य की बाहें।
5. **कोश (खजाना):** राज्य का मुख।
6. **दंड (सेना):** राज्य का मस्तिष्क।
7. **मित्र:** राज्य के कान।

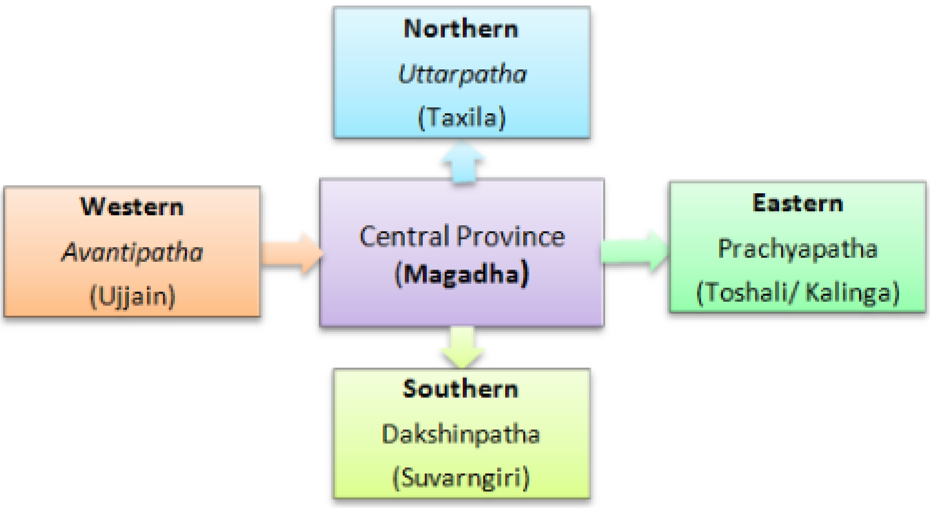

चित्र :- 1. मौर्य साम्राज्य के प्रांत

प्रमुख तीर्थ (विभाग): प्रशासन को सुचारू रूप से चलाने के लिए 18 'तीर्थ' (उच्चाधिकारी) नियुक्त थे, जिनमें 'समाहर्ता' (राजस्व प्रमुख) और 'सन्निधाता' (कोषाध्यक्ष) सबसे महत्वपूर्ण थे। मेगस्थनीज के अनुसार, राजधानी पाटलिपुत्र का प्रशासन **30 सदस्यों के एक बोर्ड** द्वारा चलाया जाता था, जो 5-5 सदस्यों की **6 समितियों** में विभाजित था। ये समितियाँ उद्योग, विदेशियों की देखरेख, जनगणना, व्यापार और कर वसूली का कार्य करती थीं। मौर्यों के पास एक विशाल स्थायी सेना थी। गुप्तचर विभाग (महामात्यसर्प) दो प्रकार के गुप्तचरों से बना था: **'संस्था'** (स्थिर) और **'संचरा'** (भ्रमणशील)। इन्हें 'गूढ़ पुरुष' कहा जाता था।

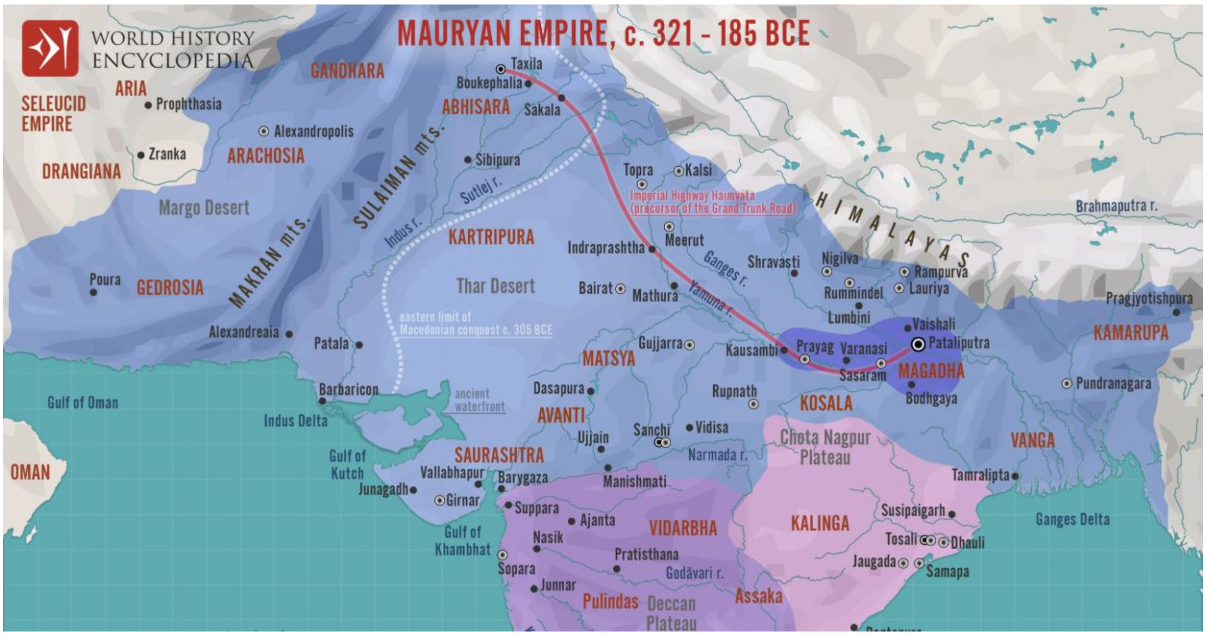

चित्र :- 2. मौर्यकालीन भारत

मौर्यकाल में राजा की स्थिति कूटस्थनीय (First among the equals) थी। धर्मरक्षक राजा परलोक में सुख का भोग करने वाला माना गया है। राजा के लिये यह आवश्यक था कि वह काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और हर्ष इन छः अवगुणों से स्वयं को दूर रखे। कौटिल्य ने राजा के लिए एक नियामक जीवन या दिनचर्या को आदर्शरूप में रखा है राजा को अत्यन्त व्यस्त कार्यक्रम का पालन करना पड़ता था जिसमें विश्राम के लिए मात्र 6 घन्टे प्राप्त थे। उसे प्रतिवेदक हर समय सूचना देते थे। अतः उसके मानसिक मनोरंजन के लिए नौका विहार या आखेट की व्यवस्था भी दी है। उसकी रक्षा हेतु अंगरक्षक दल होते थे। राजा, धनुष वाण से सुसज्जित सशस्त्र स्त्रियों का अंगरक्षक दल रखता था। कौटिल्यऔर मेगस्थनीज दोनों ने राजा की बहुत अधिक व्यस्त दिनचर्या का वर्णन किया है जिसमें उसको रात्रि में केवल छः घण्टे सोने का अवसर मिलता था।

कौटिल्य ने एक सीमा तक दैवी राजत्व को स्वीकारा है। कौटिल्य ने इसे केवल लोगों को राजभक्त बनाने मात्र के लिये ही स्वीकारा है। मौर्य सम्राटों को हर समय व हर स्थान पर सूचना देने के लिये प्रतिवेदक तथा प्रशासनिक सहायता के लिये एक परिषद थी। राजा का पूजा से व्यवहार पुत्रवत था।' कौटिल्य ने

विजेताओं की तीन कोटियां बताई हैं धर्म विजयी, लोभ विजयी और असुर विजयी। सम्राट अशोक ने धर्म विजय को श्रेष्ठ माना था। राजा के विहार अथवा क्रीड़ा के लिये अलग एक ऐसे वन की व्यवस्था की जिसमें सबको जाने की आज्ञा न थी।' राजा विहार यात्रायें करते थे।" तथा उनकी सुरक्षा के लिये स्त्रियों की अंगरक्षक सेना थी। मौर्य प्रशासन में राजा मुख्य न्यायधीश के रूप में दण्ड और पुरस्कार का उत्तरदायी होता था।' राजा का दण्ड के द्वारा सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखने के अतिरिक्त चतुर्वर्णों के कर्तव्यों को कार्यान्वित कराने का भी उत्तरदायित्व था। कौटिल्य' ने राजा को जनहित की रक्षा के लिये सदैव उद्यम करने तथा स्वयं के स्वार्थी एवं सुखों को त्यागने का सुझाव दिया।

सम्राट अशोक ने राजा को 'राजधर्म' का पालन करने का सुझाव दिया तथा शासक के रूप में अशोक स्वयं प्रत्येक विभाग का निरीक्षण करता था और राज्य के प्रमुख अधिकारियों की नियुक्ति नगर व जनपद के कार्यों पर विचार कर ग्रहण तथा गुप्त सूचनायें का अध्ययन आदि करता था।' राज्य के भीतरी व बाहरी शत्रुओं से राज्य को सुरक्षित रखना, राजा का प्रमुख का प्रमुख कर्त्तव्य था। राजत्व का जो सिद्धान्त चन्द्रगुप्त के समय स्थापित हुआ था वह परिस्थितिवश कुछ क्षेत्रों में परिवर्तन (जैसे युद्धघोष का धर्मघोष में परिवर्तन) के साथ अशोक के समय में भी बना रहा। कौटिल्य ने आखेट को व्यायाम कहकर सराहा है। राजाओं के मनोरंजन के लिये पशुओं की लड़ाईयों की क्रीड़ा आयोजित की जाती थी। किसी धार्मिक अवसर या समारोह पर राजा की सवारी (शाही जुलूस) बहुत शानदार होता था। राजा के जन्म दिवस पर समारोह मनाया जाता था तथा उसे लोग उपहार भेजते थे।' कौटिल्य ने राजा के सेवकों के साथ-साथ राजा का मनोरंजन करने वाले कुछ विशेष लोगों की सूची बताई है। राजा का निजी सेवक कोई विदेशी नहीं हो सकता था' क्योंकि यह धारण थी कि स्वदेशी सेवक किसी भी भय में राजा से विश्वासघात नहीं करते हैं।' राजा के पास विष पहचानने वाले पंक्षी थे तथा उसके समीप चिकित्सकों तथा विष विज्ञान के विशेषज्ञों (जंगली विद्) का हर समय उपस्थित रहना आवश्यक था।" राजा के आदेशों को कौटिल्य ने 'शासन' की

संज्ञा दी है।

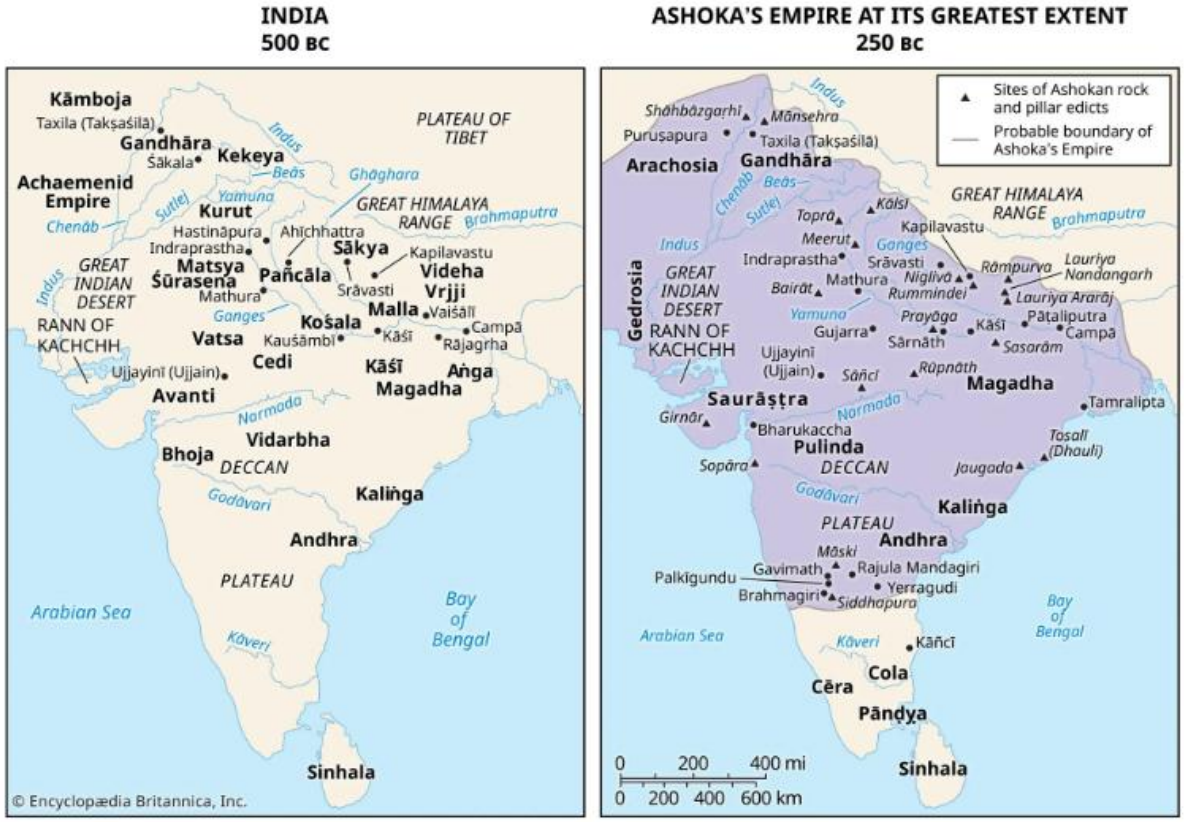

चित्र :-3. अशोक के पूर्व और पश्चात का भारत

राजा के पश्चात राजकुमार व युवराज प्रशासनिक व्यवस्था में महत्वपूर्ण हुआ करते थे। राजा के वयस्क पत्रों को एफ० डब्ल्यू टामस ने "अनेक विवाह करने वाले राजाओं की समस्या" कहा है। कौटिल्य ने लिखा है, "राजपुत्र केकड़ों की भाँति अपने ही माता-पिता को खा जाते हैं।" यदि राजा के एक पुत्र हो परन्तु वह शिक्षा, विनय तथा चरित्र से वंचित हो तो कौटिल्य उसे राज्य का उत्तराधिकारी बनाने से मना करते हैं। यदि राजा के कई पुत्र हों तो कौटिल्य के अनुसार सार्वभौम सत्ता संयुक्त परिवार के हाथों में हो जिससे सत्ता स्थायी व अजेय होने के साथ-साथ उन दोषों से भी मुक्त होगी जो एक ही शासक की बुराईयों से उत्पन्न होते हैं। महापदम् नन्द (334-322 ई०पू०) के बाद उसके बेटे मिलकर शासन करते थे और प्रतिवर्ष बारी-बारी से एक को राजा चुना जाता था। कौटिल्य ने पैतृक अधिकार की अपेक्षा उत्तराधिकारी के गुणों को अधिक महत्व दिया है। परन्तु बलात् सत्ताहरण करने वालों का समर्थन नहीं किया है। प्रशासन सम्बन्धी किसी भी कार्य को करने से पहले नीति निर्धारित की जाती थी।' नीतियों के निर्धारण के लिये राजा की मन्त्रिपरिषद होती थी। राजत्व का कार्य इन सबकी सहायता से किया जाता था। क्योंकि कौटिल्य के अनुसार राजत्व रूपी गाड़ी सिर्फ एक पहिये से नहीं चल सकती है। मन्त्रिपरिषद में मनु ने मन्त्रियों की संख्या 12, बृहस्पति ने 12 तथा उशना ने 20 परन्तु कौटिल्य ने मंत्रियों की संख्या आवश्यकतानुसार बतायी है। देवराज इन्द्र की 1000 ऋषयों की परिषद को दृष्टव्य में रखते हुये कौटिल्य ने बड़ी मंत्रिपरिषद की सिफारिश की है। क्योंकि छोटी

मंत्रिपरिषद वाला राजा अपनी शक्ति केएक अति महत्वपूर्ण भाग से वंचित रहता है।' उल्लेखनीय है कि दिव्यावदान के अनुसार बिन्दुसार (298-273 ई०पू०) के मन्त्रिपरिषद में 500 अमात्य थे।

बेनी प्रसाद के अनुसार सम्पूर्ण अर्थशास्त्र में मन्त्रियों के अधिकार क्षेत्र का सारांश निम्न प्रकार है- (1) राज्य की नीति (मंत्र) के ऊपर चिन्तन मनन।
(2) उस नीति के परिणाम को प्राप्त करना।
(3) कार्यों को क्रियान्वित करना।
(4) न्याय और व्यय से सम्बन्धित कार्य।
(5) सेना को प्रशिक्षित व सुसज्जित करना।
(6) सेना का नेतृत्व करना।
(7) शत्रु और वन की जन-जातियों के विरूद्ध रक्षा की व्यवस्था करना।
(8) शासन को बनाये रखे के लिये सतत् प्रयासरत रहना।
(9) राष्ट्रीय पतन के विरुद्ध व्यवस्था करना।
(10) राजकुमारों की रक्षा और उनका अभिषेक करना।

पाणिनि ने भी 'परिषद' को राजत्व का अभिन्न अंग मानते हुए इसके सदस्य को 'परिषद्य' और 'परिषद' के कारण शक्तिशाली बने राजा को 'परिषद्वलः' पुकारा है। मन्त्रियों के द्रोह को कौटिल्य ने बाह्य खतरे से भी अधिक खतरनाक बताकर सांप से तुलना की है। मन्त्रियों के रूप में उन्हीं लोगों को नियुक्त किया जाता था जो कुलीन, दूरदर्शी, योग्य, चतुर, वीर, निडर और राजभक्त होते थे।' मौर्य मंत्रीपरिषद में समान्यतया बहुमत का निर्णय ही मान्य होता था। परन्तु राजा को अधिकार प्राप्त था कि यदि राज्य के हित में अल्पमत की नीति को राजा उपयोगी समझे तो उसे स्वीकार कर सकता था।सामान्य परिस्थिति में मंत्रिपरिषद से विचार-विमर्श करने के लिये राजा प्रतिदिन पत्र-व्यवहार भी करता था।' अशोक के छठे शिलालेख में उसकी परिषद में होने वाले विचारों के आदान-प्रदान का उल्लेख है। अशोक के तीसरे अभिलेख से पता चलता है कि मंत्रीपरिषद राज्य के उच्चस्थ कर्मचारियों के कार्यों का निरीक्षण व उन्हें निर्देश देने का अधिकार रखती थी। जिस भवन में मंत्रिपरिषद की बैठक होती थी उसे 'मंत्रभूमि कहते थे तथा मंत्रियों से अलग-अलग अथवा एक साथ भी राय ली जा सकती थी।

कौटिल्य का कथन है कि मंत्रगोपन पर विशेष ध्यान देना चाहिये क्योंकि मंत्र का फूट जाना, राजा और मंत्राधिकारी पुरुषों दोनों के कल्याण का घातक है। मन्त्र गोपन से तात्पर्य है कि मन्त्रिपरिषद के मध्य जो भी मन्त्रणा हो उसे गोपनीय रखना। मन्त्र गोपन के अन्तर्गत निर्णय लिये गये प्रत्येक बिन्दू पर ध्यान दिया जाता था तथा इन बिन्दुओं के आधार पर ही राज्य की नीतियों का निर्माण किया जाता था। नीतिनिर्माण में भी गापनीयता रखी जाती थी। नीतियों के क्रियान्वयन तक नीति का सूत्र गोपनीय रहे इस बात का पूर्ण ध्यान रखा जाता था। मन्त्रिपरिषद का अध्यक्ष 'मन्त्रिपरिषदाध्यक्ष' कहलाता था जो अपने कार्यालय के उत्तरदायित्वों का

वहन करता था। शासन व्यवस्था, न्यायालय तथा सार्वजनिक प्रशासन के सर्वोच्च पदों पर अमात्य (परिषद के सदस्य) लोग आसीन थे।'

मन्त्रिपरिषद के तीन या चार महत्वपूर्ण सदस्यों की एक उपसमिति होती थी, जिसे 'मन्त्रिणः' कहते थे। तुरन्त निर्णय लेने वाले मामलों में राजा इनसे ही परामर्श लेता था। इनमें मन्त्री (प्रधानमंत्री), पुरोहित, सेनापति, युवराज व कोषाध्यक्ष इत्यादि होते थे।मंत्रिपरिषद व मंत्रिणः के सदस्यों को क्रमशः 12000 व 48000 पण वार्षिक वेतन मिलता था।' एक पण में 3/4 तोला चाँदी होती थी। अशोक के अभिलेखों में मन्त्रिपरिषद के लिये 'परिषा' शब्द प्रयुक्त हुआ है तथा इसके तीसरे व छठे शिलालेख से मंत्रिपरिषद के कार्यों पर प्रकाश पड़ता है।

मंत्रिपरिषद के आदेश न केवल विधिवत् लिखे जाते थे अपितु सम्राट व विभागीय अध्यक्षों के मौलिक निर्णयों पर मन्त्रिपरिषद विचार कर संसोधन या निर्णय को बदलने की सिफारिश भी करती थी। मन्त्रिपरिषद साधारणतया नये कार्य का प्रारम्भ, प्रारम्भकार्यों को पूर्ण, अन्य कार्यों को विकसित करने का कार्य और प्रशासन में अनुशासन पैदा करने के कार्यों के अतिरिक्त राजा पर नियन्त्रण रखती थी, उदाहरणार्थ-जब अशोक राज्य की आर्थिक स्थिति को खतरे में डालकर बौद्धों को दान देने के लिये तैयार हुआ तो मुख्यमंत्री (अग्रामात्य या प्रधानमंत्री) राधा गुप्त ने एक प्रस्ताव द्वारा उसकी शक्तियाँ छीन ली।

तृतीय शिलालेख, गिरनार में मन्त्रिपरिषद का कार्य, 'युक्तों' को आदेश देकर अशोक द्वारा की गई प्रशासनिक कार्यवाही को लागू करवाना बताया गया है जबकि षष्ट्म शिलालेख, गिरनार में इससे भी व्यापक अधिकार दिया गया है। जिसमें यह कहा गया है कि राजा की अनुपस्थिति में परिषद उसकी नीति पर विचार-विमर्श करके इसमें संशोधन का सुझाव दे सकती है या राजा द्वारा परिषद को सौंपे गये किसी आकस्मिक विषय पर गौर कर सकती है तथा परिषद का जो भी मत हो, उसकी सूचना राजा कोतुरन्त मिल जानी चाहिये। अन्तिम निर्णय राजा के हाथ में हैं और परिषद को सलाहकारी संस्था माना जाता है।'

मौर्य प्रशासन में उपराजा पद की भी व्यवस्था थी। सम्राट अशोक ने अपने छोटे भाई तिष्य को तथा उसके पश्चात् कुमार महेन्द्र को अपना उपराजा बनाया था। कौटिल्य ने राजा की अनुपस्थिति में केन्द्र में एक कार्यवाहक उपराजा का सुझाव दिया तथा उसे "शून्यपाल" पुकारा। कौटिल्य ने प्रशासनिक अधिकारियों को वर्गों में विभाजित कर प्रत्येक वर्ग के लिये अलग-अलग वेतन निश्चित किया। परन्तु कुल वेतन, प्राप्त राजस्व के चौथाई भाग से अधिक नहीं हो सकता था। अर्थशास्त्र में ऐसे नियमों का भी उल्लेख है जिनके अनुसार विभागाध्यक्षों को अपने-अपने विभागों का प्रशासन चलाना चाहिए।

केन्द्रीय अधिकारी तंत्र में अर्थशास्त्र के अनुसार 18 विभाग हैं तथा इन विभागों को "तीर्थ" कहा जाता था। ये अठारह "तीर्थ" ही महामात्र या उच्चाधिकारी थे। इन विभागों के पदाधिकारी

अग्रलिखित पदनाम से पुकारे जाते थेः-प्रशास्ता (राजकीय कागजातों को सुरक्षित तथा राज आज्ञाओं को लिपिबद्ध करने वाला प्रमुख अधिकारी)', दुर्गपाल (राज्य के अन्दर स्थित दुर्गों का रक्षक), अन्तपाल² (सीमावर्ती दुर्गा का रक्षक), आन्तर्वाशिक (सम्राट की अंगरक्षक सेना का प्रधान), दौवारिक (राजमहलों की देख-रेख करने वाला प्रधान अधिकारी), नागरक (नगर का प्रमुख अधि कारी) तथा आटविक (वन विभाग तथा कबायली जातियों पर देख रेख करने वाला अधिकारी)।मौर्य प्रशासन में मंत्री और पुरोहित का पद प्रायः एक ही व्यक्ति को दिया गया। कौटिल्य के अनुसार राजा को पुरोहित का उसी प्रकार अनुसरण करना चाहिए जिस प्रकार शिष्य गुरू का पुत्र पिता का या भुत्य स्वामी का करता है।' नीलकण्ठ शास्त्री का विचार है कि राजा पुरोहितों व मन्त्रियो के निर्देशन तथा शास्त्रों व स्मृतियों के सिद्धान्तों पर ही कार्य करता था। सम्राट बिन्दुसार के समय तक पुरोहित का प्रशासन में विशिष्ट स्थान था। परन्तु अशोक के लेखों में 'पुरोहित' शब्द का उल्लेख नहीं मिलता है, जो इस बात का सूचक है कि पुरोहित का राजनैतिक मामलों में हस्तक्षेप समाप्त हो चुका था।

दिव्यावदान की परम्परानुसार चन्द्रगुप्त का प्रधानमंत्री कौटिल्य, बिन्दुसार का खल्लाटक एवं सम्राट अशोक का प्रधानमंत्री राधागुप्त था। अन्य पदाधिकारी थे-युवराज (राजा के जीवित रहते हुए राज्य शासन के विविध विभागों और कार्यों में अनुभव प्राप्ति तथा राजा का हाथ बटाने हेतु नियुक्ति की जाती थी), सेनापति, समाहर्ता (राजस्व विभाग का अध्यक्ष), सन्निधाता (कोषाध्यक्ष), प्रदेष्टा (फौजदारी न्यायालय का न्यायधीश), व्यवहारिक (दीवानी न्यायालय का न्यायधीश), नायक (सेना का संचालक व छावनी बनाने वाला मंत्री), कर्मान्तिक (उद्योग-धन्धों का प्रधान निरीक्षक), मंत्रिपरिषदाध्यक्ष (मंत्रियों की सभा का अध्यक्ष), दण्डपाल (मुख्य सेनानायक, जो सेनापति से भिन्न होता था। यह अक्षौहिणों सेना का प्रधान था जिसमें 21870 रथ; 21870 हाथी; 65,610 घोड़े और 1,09,350 पैदल सैनिक होते थे; यह सेना की सामग्रियों को जुटाने वाला प्रधान अधिकारी था),

उपरोक्त अठारह तीर्थों के अतिरिक्त अनेक विभाग भी थे। कौटिल्य ने 27 विभागीय अध्यक्षों का उल्लेख किया है जिन्हें 1000 पण वार्षिक वेतन मिलता था। यथा-आकाराध्यक्ष (खानों का अध्यक्ष,), सुवर्णाध्यक्ष (स्वर्ण व चाँदी की वस्तुयें अलग-अलग बनाने वाला अधिकारी जिसका विशेष भवन अक्षशाला कहलाता था), सोवर्णिक (राजकीय टकसाल का अध्यक्ष), कोष्ठागाराध्यक्ष (खाद्य गोदामों का अधीक्षक), कुप्याध्यक्ष (वन तथा उसकी सम्पदा का अध्यक्ष), गोडयक्ष (पशुधन विभाग का अध्यक्ष), शुल्काध्यक्ष (सीमाशुल्क या पथकर का राजस्व संग्राहक), सूत्राध्यक्ष (कताई-बुनाई विभाग का अध्यक्ष), सीतिध्यक्ष (राजकीय कृषि विभाग का अध्यक्ष), सूचनाध्यक्ष (बूचड़खाने का अध्यक्ष), गणिकाध्यक्ष (वेश्याओं का निरीक्षक), नवाध्यक्ष या पत्तनाध्यक्ष (बन्दरगाहों का अध्यक्ष), वीवीताध्यक्ष (चरागाह का अध्यक्ष), संस्थाध्यक्ष (व्यापारिक मार्गों का अध्यक्ष), देवताध्यक्ष (धार्मिक संस्थाओं का अध्यक्ष), लोहाध्यक्ष (धातु विभाग का अध्यक्ष), लक्षणाध्यक्ष (टकसाल अर्थात Mint house का अध्यक्ष), लवणाध्यक्ष(नमक अधीक्षक), अक्षपाटलाध्यक्ष (महालेखाकार जो मुद्रा व लेखा दोनों कार्यालयों का प्रभारी था), रूपदर्शक (मुद्राओं की शुद्धता

व आकार प्रकार की जांच करने वाला), नीवीग्राहक (कोषाध्यक्ष) तथा मुद्राध्यक्ष (पासपोर्ट विभाग का अध्यक्ष) ।

कौटिल्य ने न्याय व्यवस्था के अन्तर्गत विधि के चार स्रोत (धर्म, व्यवहार, चरित्र अर्थात् रीति रिवाज तथा राजाज्ञा) बतायें हैं।' न्यायधीश अमात्यों के स्तर के अधिकारी तथा धर्म अर्थात् सदाचार की कसौटी पर पूरे उतरे व्यक्ति ही होते थे। न्यायालय दो प्रकार के थे। (1) धर्मस्थीय तथा (2) कण्टकशोधन। इन्हें क्रमशः दीवानी व फौजदारी न्यायालय भी कहते थे तथा इनमें तीन-तीन न्यायधीश होते थे। न्याय विधान अत्यन्त कठोर था तथा तीन प्रकार के अर्थदण्ड लिये जाते थे। (1) पूर्व साहस दण्ड-48 से 96 पण तक जुर्माना (2) मध्यम साहस दण्ड-200 से 500 पण तक जुर्माना। (3) उत्तम साहस दण्ड - 500-1000 पण तक जुर्माना। न्याय में विलम्ब नहीं था। प्रतिवादी को अपनी सफाई पेश करने का 3 से 7 दिन तक समय दिया जाता था जबकि वादी अपना प्रत्युत्तर उसी दिन देता था जिस दिन प्रतिवादी अपनी सफाई देता था। जो भी अपने तर्क पेश करने में विलम्ब करता उसे जुर्माना देना पड़ता था।

अर्थशास्त्र में लिखा है कि शत्रु, मित्र, मध्यम तथा उदासीन सब प्रकार के राजाओं एवं अट्ठारह तीर्थों की गतिविधियों पर निगाह रखने के लिये गुप्तचरों की नियुक्ति की जानी चाहिए। यूनानी लेखकों जैसे स्ट्रेबो' आदि ने गुप्तचरों को निरीक्षक तथा गुप्तचर्या, या सर्वेक्षक (Inspectors and overseers) की संज्ञा दी है। दो प्रकार के गुप्तचर होते थे-संस्था (एक स्थान में कार्यरत) तथा संचर (भ्रमणशील) ।' विदेशों में नियुक्त राजदूत खुले गुप्तचर' होते थे। गुप्तचरों के चरित्र की शुद्धता व निष्ठा की सब तरह से परीक्षा ली जाती थी तथा उन्हें 'गूढ़ पुरुष' की संज्ञा दी गई थी। गुप्तचर विभाग का प्रमुख महामात्यापसर्प' कहलाता था। राज्य में क्या हो रहा है. इस बात की राजा को सूचना देने के लिये 'प्रतिवेदक' नामक पदाधिकारी होते थे।

प्राचीन भारतीय राजा, सेना के सर्वोच्च अधिकारी होते थे। सेना रखना और उसकी रक्षा करना राजा का प्रमुख कर्त्तव्य था।' राजा में सेनापति के समान गुण होना आवश्यक माना जाता था। सेना का स्वामी होने के साथ ही साथ रक्षा का उत्तरदायी होने के कारण उसे 'रक्षाध्यक्ष' भी कहा जाता था।' कौटिल्य ने युवराज अथवा कुमार का स्थान सेनापति के पश्चात् देकर उसे सेनापति से कम महत्वपूर्ण स्थान देने का यत्न किया है। प्लिनी नामक यूनानी लेखक के अनुसार चन्द्रगुप्त की सेना में 600000 पैदल सैनिक, 30,000 घुड़सवार सैनिक और 9000 हाथी थे।" अर्थशास्त्र में अनेक स्थलों 12 पर मौर्य सेना को चतुरांगिणी सेना अर्थात् हाथी, घोड़े, रथ तथा पैदल का संगठन बताया गया है। कौटिल्य ने सैनिकों को सदैव युद्ध के लिये तत्पर होने तथा एक निश्चित स्थान में ही रहने का सुझाव दिया।' मेगास्थनीज' के विवरण से पतासम्पूर्ण सेना का प्रबन्ध 5-5 सदस्यीय 6 बोर्डो (समिति) के हाथ में था, जिसमें प्रथम बोर्ड-नौ सेना, द्वितीय बोर्ड-सेना के गौण अंग (परिवहन, रसद, ढोल बजाने वालों व गज पालकों, मिस्त्रियों शिविरों व सडकों का निर्माण, तुर्य, पताकाओं तथा ध्वाजाओं का प्रबन्ध, नदियों के घाटों का निरीक्षण करने वालो आदि का प्रबन्ध)', तृतीय बोर्ड-पैदल सेना, चतुर्थ बोर्ड-अश्व, पंचम बोर्ड हस्ति तथा षष्ठ

बोर्ड-रथ सेना का प्रबन्ध करता था। सेना के साथ चिकित्सकों का दल व परिचारिकायें होती थी जो क्रमशः घायलों की चिकित्सा तथा उन्हें रणक्षेत्र से हटाने व सैनिकों को लड़ने के लिये प्रोत्साहित करती थी।

युद्ध प्रशासन में सर्वोच्च पदाधिकारी 'सेनापति' को 48000 पण, इससे निम्न 'प्रशास्ता' को 24,000 पण, इससे निम्न 'नायक' को 12000 पण, इससे निम्न अधिकारी 'मुख्य' को 8000 पण तथा इससे निम्न 'अध्यक्ष' को 400 पण वार्षिक वेतन मिलता था। 'मुख्य' तथा 'अध्यक्ष' पर सेना के विभिन्न अंगों का कार्यभार होता था न कि सैन्य संचालन का। पत्याध्यक्ष, पैदल सेना का प्रधान अधिकारी था। इसे अभिलेखों में बलाध्यक्ष अथवा बलाधिरण भी कहा गया है। रथाध्यक्ष, रथ सेना का प्रधान अधिकारी था।' रथ के अनेक प्रकार के योद्धाओं का वर्णन महाभारत में प्राप्त होता है, जिन्हें महारथी, रथी, अतिरथी तथा अर्धरथी कहते थे। अश्वसेना के विभागाध्यक्ष को 'अश्वाध्यक्ष' कहते थे। गुप्तकाल में इन्हें भट्टाश्वपति तथा कलचुरी नरेशों के काल में महाश्वसाधनिक कहा जाता था। हस्ति सेना विभाग का प्रधान अधिकारी 'हस्त्याध्यक्ष 'कहलाता था।तथा इन हाथियों के संरक्षित वन का अध्यक्ष 'नागवनाध्यक्ष' कहलाता था, इनके अतिरिक्त हाथियों के महावत को 'हस्तिपदक' पैरों में फन्दाडालने वाले को 'पाद-पाशिक' तथा साधने वाले को 'अनीकस्थ' कहते थे।' नौ सेना विभाग का अध्यक्ष 'नावाध्यक्ष' कहलाता था। प्रशास्ता असैन्यधिकारी थे जिनका मुख्य कार्य सैनिकों द्वारा प्रयाण से पूर्व मार्गशोधन करना था।

प्राचीन भारतीय हिन्दू राज्य पूर्णतः धर्मनिरपेक्ष राज्य थे। पी. एन. बनर्जी के अनुसार प्राचीन शासन पद्धति को संवैधानिक राजतन्त्र की संज्ञा दी जा सकती है. यह सचिव तन्त्र था। प्राचीनकाल में जनसभाओं का अत्यधिक महत्व राजतांत्रिक व गणराज्यों दोनों में ही था। भारतीय राजनीति की धर्मनिरपेक्षता के सन्दर्भ में शामशास्त्री महोदय ने लिखा है कि वैदिक काल अथवा मौर्यकाल में राजा की उत्पत्ति या उसके दैवी अधि 4 सम्भवतः कोई कल्पना नहीं की गई। ए.एन.ला ने भी विचार व्यक्त किया है कार की सम्भवत कि राजनीतिक प्रवृत्तियों के अनेक व्यापक क्षेत्रों में हिन्दूओं ने विवेक और प्रतिभा का परिचय देते हुये इसके स्वरूप को धर्म से प्रभावित नहीं होने दिया। कौटिल्य के अनुसार राज्य-आदेश धर्म सहित सत्ता के अन्य सभी स्रोतों से ऊपर है।

राजा को अनवरत रूप से स्थानीय रीतिरिवाज व परम्पराओं का आदर करने के सलाह प्राचीन ग्रन्थों में दी गयी है। न्याय एवं विधी न केवल स्थानीय एवं लघु राज्य प्रशासन के लिए अतिआवश्यक थी वरन् राज्य में जटिल समाज के निर्माण तथा उसके संचालन में भी महत्वपूर्ण थी। यह जनकल्याण का एक सशक्त माध्यम रही। मौर्य काल से पूर्व, राजा अपनी प्रजा के दैनिक मामलों से दूर रहकर, एक संरक्षक का काम करता था। परन्तु अर्थशास्त्र में वर्णित अतिशय केन्द्रीयकृत प्रशासनिक व्यवस्था से स्पष्ट होता है कि राज्य व्यक्ति के न केवल सार्वजनिक अपितु पारिवारिक जीवन में भी हस्तक्षेत करता था। इस केन्द्रीयकृत राजतन्त्र को अशोक ने पैतृक निरंकुशता का रूप दे दिया। प्रथम पृथक शिलालेख में अशोक ने प्रजा के प्रति अपनी भावनाओं को व्यक्त करते हुए कहा है, "सभी मनुष्य मेरी सन्तान है। जिस प्रकार मैं अपनी सन्तान के लिए इच्छा करता है कि वे सभी इहलौकिक तथा परलौकिक हित और सुख से संयुक्त हो, उसी प्रकार सभी मनुष्यों के लिए मेरी इच्छा है।'

सम्राट अशोक ने जनता के नैतिक मार्गदर्शन का कार्य किया। ऐसा उसने पितृभाव के अन्रतगत किया। उसकी इच्छा सदैव अपनी प्रजा से व्यक्तिगत सम्पर्क बनाये रखने की रहती थी। काफी हद तक ऐसे दौरों को एक कार्यकुशल प्रशासनिक व्यवस्था ने ही सम्भव बनाया। अशोक ने प्रजाहित को सर्वाधिक महत्व देते हुए कहा, "सर्वलोकहित मेरा कर्तव्य है, ऐसा मेरा मत है। सर्वलोकहित से बढ़कर दूसरा काम नहीं है। मैं जो कुछ भी पराक्रम करता हूँ वह इसलिए कि भूतों के ऋण से मुक्त हो जाऊँ। मैं उनको इस लोक में सुखी बनाऊँ और वे दूसरे लोक में स्वर्ग प्राप्त कर सकें।" यहाँ अशोक की विचारधारा सर्वथा नवीन एवं मौलिक लगती है कि राजा, प्रजा का ऋणी होता है जिसे वह प्रजाहित के कार्य करके ही चुक चुका सकता है। कौटिल्य और मेगस्थनीज दोनों ने राजा की बहुत अधिक व्यस्त दिनचर्या का वर्णन किया है जिसमें उसको रात्रि में केवल छः घण्टे सोने को मिलता था। जब उसका शरीर आबनूस के मुगदरों से दबाया जाता था अथवा उसके शरीर के मालिश का समय रहता था तब भी वह प्रजा की शिकायतों को सुना करता था। अपने बाल झाडने तथा संवारने के समय भी उसे जनता के कार्य से इदी नहीं थी। सम्राट अशोक ने अपने प्रतिवेदकों (सूचना देने वालों) को यह स्पष्ट आदेश दिया था कि प्रत्येक समय तथा प्रत्येक स्थान में 'चाहे मैं भोजन करता रहूँ, अन्तपुर, शयनकक्ष, ब्रज (पशुशाला) में रहें, पालकी पर रहूँ, उद्यान में रहें सर्वत्र जनता हे कार्य की सूचना दें। मैं सर्वत्र जनता का कार्य करता हूँ।

आचार्य कौटिल्य ने स्पष्ट लिखा है, "जिस राजा का दर्शन प्रजा के लिए दुर्लभहै उसके अधिकारी प्रजा के कामों को अव्यवस्थित कर देते हैं जिससे राजा या तो प्रजा का कोपभाजन बनता है या शत्रुओं का शिकार होता है।" सम्भवतः विन्दुसार (298-273 ईसा पूर्व) के काल में राज्य के दूरस्थ प्रदेश तक्षशिला में सम्राट की निष्क्रियता के चलते प्रान्तीय पदाधिकारियों को जनता पर अत्याचार का अवसर मिल गया था इससे वहाँ की जनता मौर्यो के शासन के विरूद्ध हो गयी और उसने विद्रोह कर दिया तब बिन्दुसार ने अशोक को विद्रोह के दमन के लिए तक्षशिला भेजा। वहाँ पहुंबने पर अशोक को जनता ने पदाधिकारियों की शिकायत करते हुए बताया कि वे न तो राजकुमार के विरोधी है और न राजा बिन्दुसार के किन्तु दुष्ट अमात्य उन लोगों का अपमान करते हैं। सम्राट अशोक ने यह स्पष्ट निर्देश दे रक्खा था कि यदि मन्त्रिमण्डल की बैठक में कोई विचारणीय विषय आ जाए तो उसे इसकी सूचना तुरन्त 5 दी जानी चाहिए। आदर्श कार्यप्रणाली एवं राजा की सफलता के लिए कौटिल्य ने तीन ईशों का पालन आवश्यक बताया है राजा को सभी विषयों पर समान ध्यान देना साहिये, राजा को किसी भी विषय मे हस्तक्षेप करने के लिए सदैव तैयार रहना चाहिए तथा उसे अपने कर्तव्यों के पालन में कभी ढीलापन नहीं दिखाना चाहिए।

प्राचीन भारत में दंड देते समय अपराधी की सामाजिक स्थिति को आधार बनाया जाता था। कौटिल्य ने लिखा है, "कम, मध्यम और कठोरतम दंड देते समय न्यायधीश को अपराधी की सामाजिक स्थिति, अपराध का स्वरूप, अपराध का मामूली या गहरा कारण, पिछली और वर्तमान परिस्थितियाँ, समय तथा स्थान, इन सब बातों को ध्यान में रखने के अतिरिक्त यह भी ध्यान देना होगा कि अपराधी का सम्बंध

सामान्य जनता से है या राजकीय परिवार से।" एक निम्न जाति के सदस्य की तुलना में एक ब्राह्मण को धोखा देने पर दंड कहीं अधिक कठोर था। सम्राट अशोक ने न्याय प्रशासन में दण्डसमता एवं व्यवहारसमता स्थापित की। चतुर्थ स्तम्भलेख में, जो कि अपने राजकीय वर्ष के सत्ताइसवें वर्ष सम्राट अशोक ने आदेश जारी किया था, इच्छा व्यक्त की थी कि न्याय संबंधी कार्यविधि और दंड में एकरूपता रखना वांछनीय है। ध्यातव्य है कि न्याय में सामाजिक स्थिति की इस प्रकार की उपेक्षा करने से समाज में अभूतभूर्व उथल-पुथल की स्थिति पैदा हो सकती थी क्योंकि ब्राह्मणों व क्षत्रियों की नाराजगी का सामना करना असान नहीं था। ऐसे में यह बहुत सम्भव है कि अशोक के उपर्युक्त आदेश से पूर्व प्रादेशिक तथा नगर-व्यावहारिक, जो भिन्न-भिन्न प्रदेशों में न्याय का कार्य करते थे. के भेदभाव बना रहता था अतएव इस दोष को दूर करने के लिए ही अशोक ने राजको (ग्रामीण क्षेत्रों का क्षेत्राधिकारी) को न्याय में उचित व अनुचित का ध्यान रखने का आदेश दिया। अशोक का कथन है "मेरे राजुक बहुत लाख प्राणियों (एवं) जनों पर नियुक्त है। उनका जो अभिहार (उपहार, पुरूस्कार) व दण्ड (देने का अधिकार है, वह) मेरे द्वारा उनके अधीन कर दिया गया है. जिससे राजुक आश्वस्त (और) अभीत (निर्भय होकर अपने कामों में प्रवृत्त हो, जनपद के जन (मनुष्य) को हित (और) सुख प्रदान करें तथा (उस पर) अनुग्रह करें। (वे प्रजा के) सुख के कारण (और) दुःख के कारण जो जानेंगे तथा धर्मायुक्त के द्वारा जनपद के जन (मनुष्य) को उपदेश देंगे, जिससे (वे) इहलोक (धर्म, अर्थ, काम) और परलोक (मोक्ष) को प्राप्त करें। (यद्यपि राजुकों को अपने अधिकार क्षेत्र में पूर्ण स्वाधीनता मिली है, तथापि) राजुक भी मेरा परिचार (आज्ञापालन) करने को बाधित है।"

अशोक ने जनहित में पशुओं कि चिकित्सालय खुलवाये। उसने राज्य के विभिन्न स्थानों में मनुष्यों और पशुओं के लिए औषधियों की व्यवस्था व जड़ी-बूटियों को उगाने की व्यवस्था करवायी। सम्भवतः यह सब उसने राजकोष के खर्चे पर किया। इसके अतिरिक्त राजमार्गों के किनारे वृक्ष लगवाये और कुएँ खुदवाने का कार्य किया सकि मनुष्यों तथा पुशओं को पानी और वृक्षों के नीचे विश्राम की सुविधा प्राप्त हो सके। उसने प्रजा को पशु हत्या से बचने का सुझाव दिया। वह स्वयं अपने राजकीय रसोइघर में वध किये जाने वाले पशुओं की संख्या घटा कर दो मोर और एक हिरन तक ले आया और यह भी कुछ समय उपरान्त बन्द कर दिया।

अशोक के पाँचवे शिलालेख में ऐसे पशुओं की एक लम्बी सूची है जिनका वध किसी भी दशा में निषिद्ध है साथ ही एक अन्य सूची ऐसे पशुओं और जानवरों की है जिनका वध विशेष दिनों में ही किया जा सकता है। इस सूची में बत्तख, रानी चींटी और गोह को अवध्य माना गया है। यद्यपि यह स्पष्ट नहीं है कि अशोक ने ऐसी सूची क्यों जारी की परन्तु इतना अवश्य कहा जा सकता है कि देशकाल व परिस्थितियों के दृष्टिगत पशुधन को अन्धाधुध वध से देश को होने वाली हानी से बचाने तथा जानवरों के प्रति दया एवं लगाव के कारण ही उसने ऐसा आदेश जारी किया होगा साथ ही उसकी यह नीति धन्म नीति के अनुरूप थी। रोमिला थापर ने लिखा है, "यदि इस सूची में दिए गए पशुओं की तुलना 'अर्थशास्त्र' के चौदहवें खण्ड में दिए गए पशुओं से की जाए तो दोनों में कुछ संबंध देखा जा सकता है। इस भाग में नाना प्रकार के जानवरों के विभिन्न अंगो से जादू दोने और विष बनाने की युक्ति दी गई है। छिपकली परिवार का जिक्र बार बार आता है। गौह का संबंध छिपकली

कुटंब से है। इसलिए ये अवश्य घोषित किये गये क्योंकि ये विष और जादुई खुराक बनाने के काम आते थे.. भोले-भाले लोगों पर जादू टोने के प्रभाव को कम करने के लिए ही अशोक ने यह सब किया होगा।"

चित्र :- 4. सारनाथ स्तंभ

अशोक के शिलालेख में उल्लेखित निर्देशों से स्पष्ट होता है कि अशोक बलि प्रथा, बेकार के रीति-रिवाजों और कर्मकाण्डों के विरूद्ध था। अर्थशास्त्र के द्वितीय अध्याय में वधगृह के अधीक्षक से संबधित विवरण में ऐसे पशुओं और जानवरों की सूची दी गई है जिन्हें उत्पीड़न से बचाया जाना चाहिए। इनमें बन्दर, हंस, बत्तख, तोता मैना जैसे शुभपशु-पक्षी तथा इसके अतिरिक्त कुछ विशेष प्रकार की मछलियों को भी पकड़ने में भी मेक थी. संभवतः ये मछलियाँ अखाद्य थी। अशोक ने युवा और दूध देने की अवस्था से में वधगृह के अधीक्षक से संबधित विवरण में ऐसे पशुओं और जानवरों की सूची दी ई भेड़, बकरी, सुअरी तथा छः मास से

कम आयु वाले उनके बच्चों को भी अवध्य करार दिया था क्योंकि ऐसी स्थितियों में पशुओं का वध एक निर्मम कार्य था साथ ही ये माँस और दूसरे पदार्थों के लिए पाले जाते थे।

मौर्य-प्रशासन में ऐसे विशेष कर्मचारियों की नियुक्ति की गई थी जो सड़कों के निर्माण व उनकी सुरक्षा का कार्य करते थे। मेगस्थनीज ने इन्हें 'अगोरनोमोई' नाम दिया है जिसका शाब्दिक अर्थ है 'बाजार आयुक्त' । परन्तु उनका कार्य, संचार संबंधी तथा वे सड़कों के निर्माण एवं मरम्मत के लिए जिम्मेदार थे। सड़कों पर हर दस स्टेडिया के बाद नाम स्तम्भ लगवाये जाते थे जिनमें दूरी, उपपथ और अन्य सूचनाएं लिखी होती थी। स्पष्ट है कि इस प्रकार की संचार व्यवस्था से लोगों की यात्राएं कितनी सुविधाजनक हो गयी होगी। अशोक ने अपने साँतवे स्तम्भ लेख में लिखवाया है कि उसने हर आठवें कोस (लगभग 9 मील) पर कुएं खुदवाए। उत्तर-पश्चिम (तक्षशिला के क्षेत्र में) से पाटलिपुत्र तक का राजपथ सबसे महत्वपूर्ण था। कालान्तर में भी इसका महत्व बना रहा और आधुनिक भारत में यह राजपथ 'ग्रांड ट्रंक रोड' के नाम से विख्यात है। सड़कें युद्ध नौतिऔर व्यापार-नीति के दृष्टिकोण से तो महत्वपूर्ण थी ही, इसके अतिरिक्त अच्छी संचार वस्था ही सुदृढ़ प्रशासनिक व्यवस्था की द्योतक है। अतएव प्राचीन समय से ही सत्ता विकेन्द्रीकरण द्वारा (अर्थात प्रान्तों की स्थापना द्वारा) आवागमन व संचार व्यवस्था कविनाईयों को दूर करने का प्रयास किया गया था। अशोक का प्रशासन पूर्व की अपेक्षाकृत कम केन्द्रीकृत रहा। परन्तु मौर्य-प्रशासन में मार्गो की उचित व्यवस्था ने केन्द्रीय प्रशासन की पकड़ प्रान्तीय राज्यों पर और दृढ़ कर दी।

मौर्य प्रशासन कड़ी बेगार व्यवस्था को मान्यता नहीं देता था। कौटिल्य ने स्पष्ट लिखा है कि राजा से यह अपेक्षा की जाती थी कि वह किसानों से कड़ी बेगार लेने से अपने कर्मचारियों को रोके। मेगस्थनीज के अनुसार कर के बदले में शिल्पकार राज्य के लिए कुछ दिन मुफ्त कार्य करते थे। किसान भी यदि कर नही देते थे तभी उनसे कर के बदले में बेगार लिया जाता था। अशोक ने अपने पाँचवे शिलालेख में दासों और स्वामियों के बीच संबंध और बंदियों के प्रति व्यवहार पर ध्यान दिया है। अशोक ने बन्दी के परिवार की रक्षा का एक नवीन सिद्धान्त प्रतिपादित करते हुए एक दूरदर्शिता से परिपूर्ण आदेश में बंदियों के कल्याण का निरीक्षण करने वाले अधिकारियों से कहा कि अन्यायपूर्वक बन्दी बनाये गये कैदियों के कल्याण की अभिवृद्धि में लगें तथा जिन कैदियों की संतान है, जो पीड़ित हैं या जो वृद्ध हैं, उन्हें रिहा करवाने में अधिकारीगण व्यस्त रहें। स्पष्ट है कि अशोक ने बन्दीगृह को कुछ-कुछ सुधारगृह का रूप देने की चेष्टा की। इससे बन्दी के मन में सदैव यह आशा बनी रहती थी कि मुक्ति समव है। मौर्य प्रशासन ने मानवीय मूल्यों का अत्यधिक ध्यान रक्खा। सम्भवतः इसी कारणवश मेगास्थनीज को उद्धृत करते हुए डायोडोरस ने लिखा है, "कानून यह आदेश देता है कि किसी को भी किसी भी परिस्थिति में दास नहीं बनाया जाएगा। और सब व्यक्तियों को स्वतन्त्रता का समान अधिकार होगा। निष्पक्ष न्याय की दृष्टि से प्राचीन राजशास्त्रीयों ने न्याय शासन को राजा का कार्य या व्यापार बताया है। कौटिल्य का कथन है कि दिन के दूसरे भाग में राजा को पौर-जनपदों (नगरवासियों एवं ग्रामवासियों) के विवादों को निपटाना चाहिए। महाभारत एवं रामायण में लिखा है कि जो राजा आनन्द भोग में लिप्त रहता है और पूजा के झगड़ो का निपटारा नहीं करता, वह नृग की भांति दुःख भोगता है।

कौटिल्य ने राजा को सुझाव दिया है कि जब राजा न्यायालय में रहे तो विवाद का निपटारा कराने के लिए आये हुए लोगों अर्थात मुवक्किलों को द्वार पर बहुत देर तक नहीं खड़ा रहने दे, क्योंकि राजा तक पहुँच न हो सकने के कारण, राजा के आस-पास के लोग उचित एवं अनुचित कार्यों में गड़बड़ी उत्पन्न कर देंगे और प्रजा में असन्तोष होगा, परिणामस्वरूप राज्य शत्रु के हाथ में चला जायेगा।" मनु ने लिखा है कि अदण्डनीयों को दण्ड न देना राजा के लिए अपयश और नरक प्राप्त कराने वाला है।' आचार्य कौटिल्य ने राज्य के कल्याणकारी आधार को व्यक्त करते हुए लिखा है कि राजा को चाहिए कि वह दैवीय आपदा से उपस्थित संकट से जनता के बचाव के लिए पूरी व्यवस्था करे। कौटिल्य के अनुसार दैवी आपत्तियों से होने वाली आठ महाविपत्तियों के नाम है - अग्नि, जल, बीमारी, दुर्भिक्ष, चूहे, व्याघ्र, साँप तथा राक्षस।

प्राचीन काल में अधिकांश मकान लकड़ी के तथा गावों में कुछ मकान घास-फूस हे बने होते थे। इनमें आग लगने की संभावना बनी रहती थी। इसलिए कौटिल्य ने कहा है कि गर्मी की ऋतु में ग्रामवासियों को चाहिए कि वे भोजन आदि की व्यवस्था घर के बाहर करें अथवा दशकुली का रक्षक गोप नामक अधिकारी जिस स्थान को उपयुक्त बताये वहीं पर भोजन आदि की व्यवस्था करें। अर्थशास्त्र में जानबूझकर कर आग लगाने वालों के लिए राज्य द्वारा मृत्यु दण्ड देने को उचित बताया गया है। वर्षा ऋतु में बाढ़ से बचने के लिए कौटिल्य ने अनेक उपायों की चर्चा की है यथा लकड़ी, बाँस के बेड़े, नाव, लुम्बी (अलावु), मशक (दृति), तमेड़ (प्लव), लकड़ इत्यादि साथ ही नदी के किनारे बसे हुए ग्रामवासियों को पलायन का सुझाव दिया है। कौटिल्य ने किसी सूखते हुए को देखकर उसे न बचाने वाले आदमी पर बारह पण के अर्थ दण्ड की व्यवस्था हो। बीमारियों के सम्बन्ध में कौटिल्य का कहना है कि औपनिषदिक प्रकरण में सुझाये उपायों के द्वारा कृत्रिम बीमारियों को रोका जाए तथा अकृत्रिम बीमारियों को वैद्य द्वारा चिकित्सा करके और सिद्ध तपस्वीयों द्वारा शान्ति कर्म, व्रत, उपवास आदि अनुष्ठानों से दूर किया जाए।'

कौटिल्य ने कृषि-कर्म को वर्षा पर आश्रित नहीं रखा, बल्कि सिंचाई की व्यवस्था राज्य पर डाली। फिर भी यदि दुर्भाग्य से अकाल पड़ जाय तो ऐसी स्थिति से निपटने के लिए कौटिल्य ने राजा को निर्देशित किया कि राज्य में दुर्भिक्ष पड़ जाने पर राजा को बीज और अन्न का वितरण जनता में करना चाहिए अथवा अकाल पीड़ितों को उचित वेतन पर उनसे दुर्ग या सेतु आदि का निर्माण कराया जाय। काम करने में असमर्थ लोगों को केवल अन्न दिया जाए अथवा उन्हें समीप के दूसरे दुर्भिक्ष रहित राज्य तक पहुँचाने वा प्रबन्ध कर दिया जाय अथवा मित्र राजा से सहायता ली जाय। अपने राज्य के धनवान तंगों पर विशेष कर लगाकर तथा उनसे एक मुश्त रकम लेकर इस विपत्ति का सामना किया जाय। अर्थशास्त्र में उन सभी छोटे-बड़े तथ्यों पर कौटिल्य ने जनकल्याण की ओर 3 4 मान दिया है जिससे जनता प्रभावित होती है यथा-चूहों से रक्षा, हिंसक पशुओं जैसे व्याघ्र से रखा, साँप से रक्षा तथा राक्षसों (भूत-प्रेतों) से रक्षा। कौटिल्य के अनुसार भयों के अवस्थित होने पर सब तरह से राजा प्रजा की रक्षा अपनी सन्तान की तरह करे।

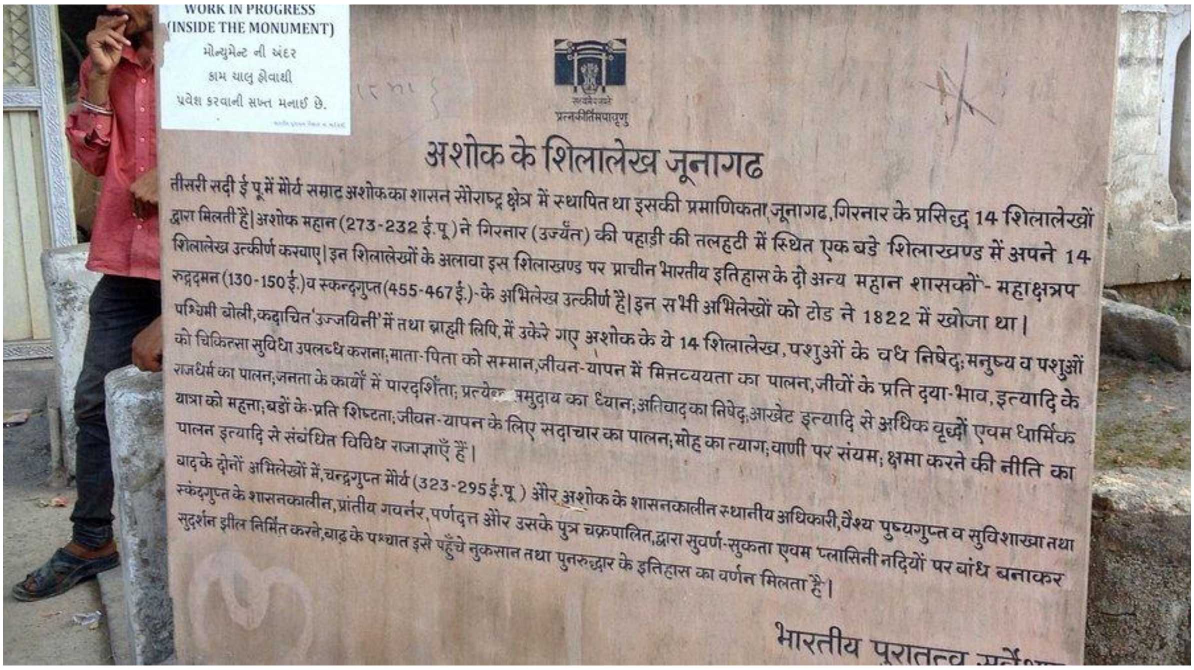

चित्र :- 5. जूनागढ़ अभिलेख

अर्थशास्त्र से स्पष्ट होता है कि निस्सन्देह राजा को अपनी समस्त प्रजा का पुत्रवत पालन करना होता था. असमर्थ प्रजा की रक्षा तथा भरण-पोषण का उत्तरदायित्व स्वयं राज्य पर था। राज्य निर्धन, असहाय, विधवाओं आदि के जीविका हेतु कार्य की दोजना का संचालन करता था, जो स्त्रियां अपने घर पर ही रहकर काम करना चाहती ही उनके घर पर ही रूई पहुंचा कर सूत कतवाया जाता था। इस प्रकार राज्य सहायतापेक्षी नागरिकों के हित के कार्य करती थी और राज्य में बेकार या भूखे रहने की सनत्या उपस्थित नहीं हो पाती थी। कौटिल्य ने लिखा है कि बालक, बूढ़े, रोगी, दुःखी हथा अनाथ व्यक्तियों का राजा सदा भरण-पोषण करे। अप्राजाता (बंध्या) स्त्रियों की तथा प्रजाता स्त्रियों की राजा सदैव रक्षा करे। इस प्रकार कौटिल्य ने एक कल्याणकारी राज्य की व्यवस्था दी जिसमें लोगों के सांस्कृतिक, नैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक उन्नति की व्यवस्था भी की। अर्थशास्त्र में राज्य के ऐसे स्वरूप का वर्णन मिलता है जितने लोगों को इस लोक तथा परलोक में भी आनन्द की प्राप्ति हो सके।

भण्डारकर महोदय ने अशोक की महानता के कारण बताते हुए लिखा है कि समस्त चेतन-जगत का सामाजिक तथा आध्यात्मिक कल्याण अशोक के जीवन का लक्ष्य था। चेतन जगत से ताप्पर्य न केवल उसकी प्रजा से है बल्कि समस्त मानव जीवन का हित है। अशोक में सच्ची सहिष्णुता थी। वह बौद्ध धर्म का संरक्षक था, परन्तु उसके संरक्षण में अन्य धर्म-प्रवर्तकों की भाँति न तो प्रजातीय, न राष्ट्रीय न कौटुम्बिक गर्व अथवा पक्षपात था। सातवें स्तम्भ लेख द्वारा अशोक ने जनकल्याण की भावना का परिचय दिया है- "मार्गो में मैनें वट वृक्ष लगवा दिये हैं जिससे वे मनुष्य एवं पशुओं को आया दें। आम्रकुञ्ज लगवा दिये है।" अशोक ने अपने शासनकाल में पच्चीस बार बन्दियों को कारागृह से मुक्त किया.. राजधानी तथा साम्राज्य के प्रमुख नगरों में

धिभिन्न अवसरों तथा निश्चित तिथि को रोगियों, अपंगो, असहायों, समाज के दलित वर्ग के सदस्यों धार्मिक तथा शिक्षण संस्थाओं आदि को दान दिया जाता था।

निष्कर्ष :-

मौर्य शासन काल में भारत ने सर्वप्रथम राजनीतिक एकता प्राप्त की। इसके साथ ही चक्रवर्ती सम्राट का आदर्श चरितार्थ हुआ। तत्कालीन आर्थिक आवश्यकता ने मौर्य शासन को एक केंद्रीयकृत नौकरशाही का रूप दे दिया जो मौर्य शासन पद्धति की एक प्रमुख विशेषता है। इस काल में राजतंत्र का विकास हुआ तथा गणतंत्र का ह्रास हुआ। कौटिल्य ने सप्तांग सिद्धांत दिया जिनमें राजा, अमात्य, जनपद, दुर्ग, कोष, सेना और मित्र है। राजा की सहायता के लिए मंत्रिपरिषद होती थी जो प्रशासन संबंधित सलाह राजा को प्रदान करती थी, परंतु राजा मंत्रिपरिषद की सलाह मानने का बाध्य नहीं था। अंतिम निर्णय राजा का ही होता था। मौर्य पितृसत्तात्मक राजस्व के समर्थक थे। अशोक ने अपने वृहत शिलालेख में कहा कि,"सभी मनुष्य मेरी संतान है।" राजा प्रजा के कल्याण और हित को काफी महत्व देते थे। अर्थशास्त्र में 18 विभागों का उल्लेख है जिसे तीर्थ कहा गया है। तीर्थ के अध्यक्ष को महामात्र कहते हैं। तीर्थ को 48 हज़ार पण वेतन वार्षिक मिलता था। राजा द्वारा मुख्यमंत्री व पुरोहित की नियुक्ति उनके चरित्र को ध्यान में रखकर की जाती थी इस क्रिया को उपधा परीक्षण कहा जाता था। यह लोग मंत्रिमंडल के आतंरिक सदस्य थे। मंत्रिमंडल के अतिरिक्त परीषा मन्त्रिणः भी होता था जो एक तरह से मंत्री परिषद ही था। अमात्य प्रशासनिक कार्य में सम्मिलित विशाल प्रशासनिक वर्ग को कहा जाता था। आय-व्यय का ब्यौरा रखना, वार्षिक बजट तैयार करना, राजस्व एकत्र करना समाहर्ता के कार्य थें।वह अक्षपटलाध्यक्ष (महालेखपाल) के कार्यों के निरीक्षण द्वारा आय-व्यय नियंत्रण रखता था। राज्य अपने पूर्ण आधिपत्य वाले उद्योगों का संचालन भी स्वयं ही करता था जैसे- खान, नमक अस्त्र-शस्त्र् व्यवसाय पिंड कर एक प्रकार का रिवाजी करता इसका निर्धारण सामूहिक रूप से होता था गांव द्वारा उत्पादन के रूप में देखा करता था जंगल राज्य की संपत्ति होते थे अन्य संसाधनों से प्राप्त राजस्व को राष्ट्र कहा जाता था हिरण कर एक प्रकार का नगद कर था भाग कर निजी खेती करने पर राजा को उपज का छठा भाग दिया जाता था भली भी एक प्रकार का भू राजस्व था सैनिक प्रबंधन की देखरेख करने वाले अधिकारी अंत पल होता था इस प्रकार मौर्य प्रशासन पर जाकर जनकल्याण के लिए सदैव तत्पर था । यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि प्राचीन समय में मार्स प्रशासन ने शासन की ऐसी नींव रखी जिसको आधार मानते हुए कालांतर में आने वाले विभिन्न वंशों ने आवश्यक परिवर्तनों के साथ इसको स्वीकार किया ।

स्वयं-मूल्यांकन प्रश्न (Self-Assessment)

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer)

1. मौर्य प्रशासन में अमात्य की भूमिका क्या थी?
2. समाहर्ता किस कार्य के लिए जिम्मेदार था?
3. प्रांतीय प्रशासन की मुख्य विशेषताएँ क्या थीं?
4. मौर्यकालीन कर प्रणाली का वर्णन कीजिए।
5. गुप्तचर व्यवस्था का महत्व बताइए।

मौर्य प्रशासन (Mauryan Administration) – MCQs

1. मौर्य साम्राज्य का संस्थापक कौन था?

(A) अशोक
(B) चंद्रगुप्त मौर्य
(C) बिंदुसार
(D) समुद्रगुप्त
 उत्तर: (B)

2. चंद्रगुप्त मौर्य का प्रधानमंत्री कौन था?

(A) विष्णुगुप्त
(B) चाणक्य
(C) कालिदास
(D) पतंजलि
 उत्तर: (B)

3. 'अर्थशास्त्र' ग्रंथ के लेखक कौन हैं?

(A) कालिदास
(B) मेगस्थनीज
(C) चाणक्य
(D) बाणभट्ट
 उत्तर: (C)

4. मौर्य प्रशासन में राजा को किस प्रकार का शासक माना जाता था?

(A) लोकतांत्रिक
(B) निरंकुश
(C) संघीय

(D) धार्मिक

 उत्तर: (B)

5. मौर्यकाल में प्रांतीय प्रशासन का प्रमुख कौन होता था?

(A) ग्रामणी

(B) अमात्य

(C) कुमार

(D) सेनापति

 उत्तर: (C)

6. 'मेगस्थनीज' किस देश से आया था?

(A) चीन

(B) यूनान (ग्रीस)

(C) फारस

(D) रोम

 उत्तर: (B)

7. मेगस्थनीज ने अपनी पुस्तक में किस नगर का वर्णन किया है?

(A) उज्जैन

(B) पाटलिपुत्र

(C) तक्षशिला

(D) काशी

 उत्तर: (B)

8. मौर्यकाल में गुप्तचर विभाग को क्या कहा जाता था?

(A) पुलिस विभाग

(B) संचार विभाग

(C) गुप्तचर तंत्र

(D) न्याय विभाग

 उत्तर: (C)

9. मौर्य प्रशासन में 'अमात्य' का कार्य क्या था?

(A) सैनिक कार्य

(B) प्रशासनिक कार्य

(C) धार्मिक कार्य

(D) व्यापारिक कार्य

 उत्तर: (B)

10. 'धर्ममहामात्र' की नियुक्ति किसने की थी?

(A) चंद्रगुप्त मौर्य

(B) बिंदुसार

(C) अशोक

(D) हर्षवर्धन

 उत्तर: (C)

11. मौर्यकाल में न्याय व्यवस्था का प्रमुख कौन था?

(A) सेनापति

(B) राजा

(C) ग्रामणी

(D) व्यापारी

 उत्तर: (B)

12. 'पाटलिपुत्र' किस नदी के किनारे स्थित था?

(A) गंगा

(B) यमुना

(C) सरस्वती

(D) नर्मदा

 उत्तर: (A)

13. मौर्यकाल में ग्राम का प्रमुख कौन होता था?

(A) अमात्य

(B) ग्रामणी

(C) सेनापति

(D) महामात्र

 उत्तर: (B)

14. मौर्य प्रशासन में कर वसूली का प्रमुख स्रोत क्या था?

(A) व्यापार

(B) भूमि कर
(C) दान
(D) युद्ध
 उत्तर: (B)

15. मौर्यकाल में सेना का प्रमुख अधिकारी कौन था?
(A) महामात्र
(B) सेनापति
(C) अमात्य
(D) कुमार
 उत्तर: (B)

16. 'अर्थशास्त्र' मुख्यतः किस विषय से संबंधित है?
(A) धर्म
(B) राजनीति और प्रशासन
(C) साहित्य
(D) कला
 उत्तर: (B)

17. मौर्यकाल में नगर प्रशासन किसके अधीन था?
(A) ग्रामणी
(B) नगरपालिका समिति
(C) राजा
(D) सेनापति
 उत्तर: (B)

18. अशोक के शिलालेख किस भाषा में लिखे गए थे?
(A) संस्कृत
(B) पाली/प्राकृत
(C) हिंदी
(D) तमिल
 उत्तर: (B)

19. मौर्यकाल में राजस्व विभाग का प्रमुख कौन था?

(A) समाहर्ता

(B) सेनापति

(C) ग्रामणी

(D) महामात्र

□ **उत्तर:** (A)

20. मौर्य प्रशासन की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता क्या थी?

(A) कमजोर शासन

(B) केंद्रीकृत प्रशासन

(C) लोकतांत्रिक प्रणाली

(D) सामंती व्यवस्था

□ **उत्तर:** (B)

संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

1. **अग्रवाल, डी.पी. (2005).** *भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण*. ग्रंथ शिल्पी, नई दिल्ली।
2. **पाण्डेय, राजबली (1962).** *भारतीय पुरालिपि*. मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।
3. **मजूमदार, आर.सी. (1951).** *प्राचीन भारत*. मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
4. **रायचौधरी, एच.सी. (1923).** *प्राचीन भारत का राजनीतिक इतिहास*. किताब महल, इलाहाबाद।
5. **शर्मा, रामशरण (2005).** *प्रारंभिक भारत का परिचय*. ओरिएंट ब्लैकस्वान, नई दिल्ली।
6. **थापर, रोमिला (2002).** *पूर्वकालीन भारत (प्रारंभ से 1300 ई. तक)*. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
7. **सिंह, उपिंदर (2016).** *प्राचीन एवं पूर्व मध्यकालीन भारत का इतिहास*. पियर्सन एजुकेशन, दिल्ली।
8. **झा, डी.एन. एवं श्रीमाली, के.एम. (2009).** *प्राचीन भारत का इतिहास*. हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय।
9. **लुनिया, बी.एन. (2010).** *प्राचीन भारतीय संस्कृति*. लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।
10. **पाठ्यक्रम:** *प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग*, सिद्धार्थ विश्वविद्यालय, कपिलवस्तु, सिद्धार्थनगर (उ.प्र.)।